

श्रीमद्भागवत नवम स्कन्ध अध्याय 7: राजा हरिश्चन्द्र

19 September 2026



पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



निःसन्तान और शोकाकुल राजा हरिश्चन्द्र जल के तट पर खड़े होकर, हाथ जोड़े, जल के स्वामी वरुण से पुत्र का वरदान माँगते हैं — एक ऐसा व्रत जो उनकी सत्यनिष्ठा को उसकी अन्तिम सीमा तक परखेगा।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवत विङ्गम में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पवित्र कथाओं एवं शिक्षाओं की एक श्रद्धापूर्ण यात्रा। नवम स्कन्ध का यह सातवाँ अध्याय सूर्यवंश को सम्राट् मान्धाता से राजा हरिश्चन्द्र तक आगे ले जाता है, जिनकी वरुण को दी प्रतिज्ञा और अपने पुत्र रोहित के प्रति स्नेह उन्हें, वर्षों की परीक्षा से गुज़ारकर, उस एकमात्र गुण तक पहुँचाते हैं जिसके लिए उनका नाम युगों से स्मरण किया जाता है — अटल

अध्याय-परिचय

- ग्रन्थ: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 9 (नवम स्कन्ध)
- अध्याय: 7 (सप्तम अध्याय)
- अध्याय शीर्षक: मान्धाता का वंश और सत्यनिष्ठ राजा हरिश्चन्द्र
- मुख्य वक्ता: श्री शुकदेव गोस्वामी, राजा परीक्षित को कथा सुनाते हुए — सम्पूर्ण कथा सूत गोस्वामी द्वारा नैमिषारण्य में शौनक ऋषि एवं ऋषि-समुदाय को सुनाई गई
- मुख्य श्रोता: राजा परीक्षित
- मुख्य स्थल: सूर्यवंश के राज्य; पाताल-लोक रसातल; राजा हरिश्चन्द्र की यज्ञशाला
- केन्द्रीय विषय: मान्धाता के वंशज — रसातल में पुरुकुत्स, त्रिशङ्कु तक चली परम्परा — और राजा हरिश्चन्द्र, उनके पुत्र रोहित, तथा उस यज्ञ की कथा जिससे राजा मुक्त हुए और सत्य में अटल हुए
- मुख्य श्लोक-परास: नवम स्कन्ध, अध्याय 7, श्लोक 1-27
- मुख्य संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण

मान्धाता के वंश की तीन शाखाएँ

शुकदेव ने मान्धाता के तीन पुत्रों — पुरुकुत्स, अम्बरीष और योगी मुचुकुन्द — से कथा-सूत्र आगे बढ़ाया। अम्बरीष को उनके पितामह युवनाश्व ने गोद लिया; अम्बरीष से यौवनाश्व और यौवनाश्व से हरित हुए। ये तीनों — पुरुकुत्स, अम्बरीष और हरित — मान्धाता के वंश के अग्रणी, उसकी तीन महान् शाखाओं के मूल बने।

सर्पों के लोक में पुरुकुत्स

पुरुकुत्स को दिव्य नदी नर्मदा उसके भाइयों, नाग-दैत्यों, ने विवाह में दी। सर्पराज वासुकि के आदेश से नर्मदा पुरुकुत्स को पाताल के एक लोक रसातल में ले गई।

नर्मदा भ्रातृभिर्दत्ता पुरुकुत्साय योरगैः ।
तया रसातलं नीतो भुजगेन्द्रप्रयुक्तया ॥ २ ॥

narmadā bhrātṛbhir dattā purukutsāya yoragaiḥ tayā rasātalaṁ nīto bhujagendra-prayuktayā

अर्थ: नर्मदा उसके भाई नागों द्वारा पुरुकुत्स को विवाह में दी गई; उसी के द्वारा, सर्पराज वासुकि के आदेश से, वह रसातल में ले जाया गया।
(नवम स्कन्ध, अध्याय 7, श्लोक 2)

वहाँ, भगवान् विष्णु से प्राप्त शक्ति धारण करते हुए, पुरुकुत्स ने उन गन्धर्वों का वध किया जो वध के योग्य थे, और इस सेवा के बदले वासुकि ने उसे वरदान दिया: कि जो कोई इस प्रसंग का स्मरण करेगा, उसे सर्पों से कोई भय न होगा।

गन्धर्वानवधीत् तत्र वध्यान् वै विष्णुशक्तिधृक् ।

नागाल्लब्धवरः सर्पादभयं स्मरतामिदम् ॥ ३ ॥

gandharvān avadhīt tatra vadyān vai viṣṇu-śakti-dhṛk nāgāl labdha-varaḥ sarpād abhayaṁ smaratām idam

अर्थ: वहाँ भगवान् विष्णु की शक्ति धारण करके उसने वध योग्य गन्धर्वों का वध किया, और नागों से यह वरदान पाया कि जो इसका स्मरण करे वह सर्पों के भय से मुक्त रहे। (नवम स्कन्ध, अध्याय 7, श्लोक 3)



वासुकि के आदेश पर नदी-देवी नर्मदा द्वारा पाताल-लोक रसातल में ले जाए गए पुरुकुत्स — भगवान् विष्णु से शक्ति पाकर — अपराधी गन्धर्वों का वध करते हैं और सर्पों का रक्षा-वरदान अर्जित करते हैं (श्लोक 2-3)।

त्रसदस्यु से त्रिशङ्कु तक

पुरुकुत्स का पुत्र त्रसदस्यु था, जिसका पुत्र अनरण्य; अनरण्य से हर्यश्च, हर्यश्च से अरुण, और अरुण से त्रिबन्धन हुआ। त्रिबन्धन का पुत्र सत्यव्रत था, जो त्रिशङ्कु नाम से प्रसिद्ध हुआ। अपने पिता के शाप से चाण्डाल की नीच अवस्था को प्राप्त होकर भी, वह ऋषि विश्वामित्र की असाधारण शक्ति से सशरीर स्वर्ग को उठा। जब देवताओं ने उसे सिर के बल नीचे गिराया, तब विश्वामित्र ने उसे बलपूर्वक आकाश में स्थिर कर दिया, जहाँ वह आज भी एक तारे के रूप में देखा जा सकता है।

तस्य सत्यव्रतः पुत्रस्त्रिशङ्कुरिति विश्रुतः ।
प्राप्तश्चाण्डालतां शापाद् गुरोः कौशिकतेजसा ॥ ५ ॥
सशरीरो गतः स्वर्गमद्यापि दिवि दृश्यते ।
पातितोऽवाक् शिरा देवैस्तेनैव स्तम्भितो बलात् ॥ ६ ॥

*tasya satyavrataḥ putras triśaṅkur iti viśrutaḥ prāptaś cāṇḍālatāṁ śāpād guroḥ kauśika-tejasā
saśarīro gataḥ svargam adyāpi divi dṛśyate pātito 'vāk-śirā devais tenaiva stambhito balāt*

अर्थ: उसका पुत्र सत्यव्रत, जो त्रिशङ्कु नाम से प्रसिद्ध हुआ, अपने पिता के शाप से चाण्डालत्व को प्राप्त होकर भी कुशिकवंशी विश्वामित्र के तेज से सशरीर स्वर्ग को उठा; जब देवताओं ने उसे सिर के बल गिराया, तब उसी ऋषि ने उसे बलपूर्वक स्थिर कर दिया, और वह आज भी आकाश में देखा जाता है। (नवम स्कन्ध, अध्याय 7, श्लोक 5-6)



ऋषि विश्वामित्र की शक्ति से थमे हुए, राजा त्रिशङ्कु तारों के बीच सिर के बल लटके हुए हैं — न पृथ्वी पर गिरे, न स्वर्ग में प्रवेश पाए — और आज भी वहाँ देखे जा सकते हैं (श्लोक 5-6)।

हरिश्चन्द्र का शोक

त्रिशङ्कु का पुत्र हरिश्चन्द्र था, जिसके निमित्त ऋषि विश्वामित्र और वसिष्ठ, परस्पर शाप देकर, दो पक्षियों में बदलकर अनेक वर्षों तक युद्ध करते रहे।

त्रैशङ्कवो हरिश्चन्द्रो विश्वामित्रवसिष्ठयोः ।
यन्निमित्तमभूद् युद्धं पक्षिणोर्बहुवार्षिकम् ॥ ७ ॥

traisāṅkavo hariścandro viśvāmitra-vaśiṣṭhayoḥ yan-nimittam abhūd yuddham pakṣiṇor bahu-vārṣikam

अर्थ: त्रिशङ्कु का पुत्र हरिश्चन्द्र उस युद्ध का कारण बना जो पक्षी बने विश्वामित्र और वसिष्ठ के बीच अनेक वर्षों तक चला। (नवम स्कन्ध, अध्याय 7, श्लोक 7)

हरिश्चन्द्र निःसन्तान थे, और उनका हृदय शोक से भारी था। ऋषि नारद के परामर्श पर उन्होंने जल के स्वामी वरुण की शरण ली, यह प्रार्थना करते हुए, “हे प्रभो, मुझे पुत्र प्राप्त हो।”

सोऽनपत्यो विषण्णात्मा नारदस्योपदेशतः ।

वरुणं शरणं यातः पुत्रो मे जायतां प्रभो ॥ ८ ॥

so 'napatyo viṣaṇṇātmā nāradasypadeśataḥ varuṇam śaraṇam yātaḥ putro me jāyatām prabho

अर्थ: निःसन्तान और उदास हृदय से, देवर्षि नारद के परामर्श पर उसने जल-स्वामी की शरण ग्रहण की और विनती की — “हे स्वामी, मुझे एक सुयोग्य पुत्र प्रदान करें।” (नवम स्कन्ध, अध्याय 7, श्लोक 8)

उन्होंने व्रत लिया, “हे महाप्रभो, यदि पुत्र उत्पन्न हुआ, तो मैं उसी की बलि देकर आपकी पूजा करूँगा।” वरुण ने स्वीकार किया, और समय आने पर हरिश्चन्द्र को रोहित नामक पुत्र प्राप्त हुआ।

यदि वीरो महाराज तेनैव त्वां यजे इति ।

तथेति वरुणेनास्य पुत्रो जातस्तु रोहितः ॥ ९ ॥

yadi vīro mahārāja tenaiva tvām yaje iti tatheti varuṇenāśya putro jātas tu rohitaḥ

अर्थ: “हे महाराज, यदि वीर पुत्र उत्पन्न हुआ, तो मैं उसी से आपकी पूजा करूँगा।” वरुण ने कहा, “ऐसा ही हो,” और उसे रोहित नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। (नवम स्कन्ध, अध्याय 7, श्लोक 9)

पिता के स्नेहपूर्ण विलम्ब

जब रोहित का जन्म हुआ, वरुण आए और चाहा कि अब बालक की बलि दी जाए। किन्तु पिता का हृदय, स्नेह से बँधा हुआ, ऐसा न कर सका। हरिश्चन्द्र ने निवेदन किया कि बलि-पशु दस दिन बाद ही योग्य होता है; फिर, जब बालक के दाँत निकल आएँ; फिर, जब वे दाँत गिर जाएँ; फिर, जब नए दाँत आ जाएँ; और अन्ततः तभी, जब क्षत्रिय बालक कवच धारण करने योग्य हो जाए। बार-बार जल के स्वामी प्रतीक्षा करते रहे, जबकि राजा, पुत्र के प्रति कोमल, विलम्ब के कारण खोजते रहे।

रोहित का वन को पलायन

जब रोहित इतना बड़ा हुआ कि समझने योग्य हो गया, उसने अपने पिता की उस बलि की मंशा को जान लिया, और अपने प्राण बचाने की इच्छा से धनुष लेकर वन में चला गया।

रोहितस्तदभिज्ञाय पितुः कर्म चिकीर्षितम् ।
प्राणप्रेप्सुर्धनुष्पाणिररण्यं प्रत्यपद्यत ॥ १६ ॥

rohitas tad abhijñāya pituḥ karma cikīrṣitam prāṇa-prepsur dhanuṣ-pāṇir aranyaṁ pratyapadyata

अर्थ: अपने पिता की इच्छित मंशा को जानकर, रोहित अपने प्राण बचाने की इच्छा से धनुष हाथ में लेकर वन को चला गया। (नवम स्कन्ध, अध्याय 7, श्लोक 16)



यह जानकर कि उसे बलि में अर्पित किया जाना है, राजकुमार रोहित धनुष उठाकर अपने प्राण बचाने के लिए वन में चला जाता है, अपने पिता का महल पीछे छोड़कर (श्लोक 16)।

यह सुनकर कि उसके पिता को क्रुद्ध वरुण ने जलोदर-रोग से ग्रस्त कर दिया है, रोहित घर लौटने ही वाला था, किन्तु इन्द्र ने उसे रोक दिया — क्योंकि लौटने पर वह अवश्य बलि चढ़ा दिया जाता। इसके बदले इन्द्र ने उसे परामर्श दिया कि वह पृथ्वी पर पवित्र नदियों एवं तीर्थ-स्थलों का सेवन करते हुए एक पुण्य-यात्रा करे, और तदनुसार रोहित पूरे एक वर्ष वन में रहा।

भूमेः पर्यटनं पुण्यं तीर्थक्षेत्रनिषेवणैः ।
रोहितायादिश्च्छक्रः सोऽप्यरण्येऽवसत् समाम् ॥ १८ ॥

bhūmeḥ paryaṇam puṇyam tīrtha-kṣetra-niṣevanaiḥ rohitāyādisac chakraḥ so 'py araṇye 'vasat samām

अर्थ: इन्द्र ने रोहित को तीर्थ-स्थलों एवं पवित्र क्षेत्रों का सेवन करते हुए पृथ्वी पर पुण्य-पर्यटन का उपदेश दिया; और वह भी एक वर्ष वन में रहा।
(नवम स्कन्ध, अध्याय 7, श्लोक 18)



वर्ष-दर-वर्ष, इन्द्र वृद्ध ब्राह्मण के वेश में भटकते राजकुमार रोहित के समक्ष प्रकट होते हैं, उसे घर लौटने के बजाय पृथ्वी पर अपनी पवित्र तीर्थ-यात्रा जारी रखने का परामर्श देते हुए (श्लोक 18-19)।

दूसरे, तीसरे, चौथे और पाँचवें वर्ष में भी इन्द्र वृद्ध ब्राह्मण के वेश में उसके पास आते रहे, और प्रत्येक बार वही परामर्श दोहराते रहे, इस प्रकार राजकुमार को उसके भ्रमण में सुरक्षित रखते रहे।

यज्ञ और राजा की मुक्ति

छठे वर्ष में, अन्ततः अपने पिता से मिलने नगर की ओर लौटते हुए, रोहित ने भृगुवंशी ऋषि अजीगर्त के मँझले पुत्र शुनःशेष को एक प्रतिनिधि बलि-पशु के रूप में मोल लिया। बालक को अपने पिता को सौंपकर और प्रणाम करके, रोहित ने हरिश्चन्द्र को अपना व्रत पूर्ण करने का साधन दे दिया। तब यशस्वी राजा ने एक नरमेध यज्ञ द्वारा वरुण एवं अन्य देवताओं को प्रसन्न किया और अपने रोग से मुक्त हुए। उस महान् यज्ञ में चार परम शक्तिशाली ऋषियों ने कर्म किया — विश्वामित्र होता के रूप में, आत्मसंयमी जमदग्नि अध्वर्यु के रूप में, वसिष्ठ ब्रह्मा के रूप में, और अयास्य उद्गाता के रूप में। राजा से प्रसन्न होकर इन्द्र ने उन्हें सोने का रथ प्रदान किया।

तस्मै तुष्टो ददाविन्द्रः शातकौम्भमयं रथम् ।

शुनःशेषस्य माहात्म्यमुपरिष्ठात् प्रचक्ष्यते ॥ २३ ॥

tasmai tuṣṭo dadāv indraḥ śātakaumbhamayaṁ ratham śunaḥśephasya māhātmyam upariṣṭāt pracakṣyate

अर्थ: प्रसन्न होकर इन्द्र ने उन्हें सोने का रथ दिया; शुनःशेष की महिमा आगे वर्णित की जाएगी। (नवम स्कन्ध, अध्याय 7, श्लोक 23)



हरिश्चन्द्र के महान् यज्ञ में चार परम शक्तिशाली ऋषि — विश्वामित्र, जमदग्नि, वसिष्ठ और अगस्त्य — कर्म करते हैं, राजा अपने रोग से मुक्त होते हैं, और प्रसन्न इन्द्र उन्हें सोने का रथ प्रदान करते हैं (श्लोक 20-23)।

हरिश्चन्द्र का मोक्ष

एक अन्य अवसर पर ऋषि विश्वामित्र, राजा और उनकी रानी शैब्या की अटल दृढ़ता को देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुए — वह दृढ़ता जो उनकी पूर्ण सत्यनिष्ठा से उपजी थी — और उन्होंने हरिश्चन्द्र को आत्मा का अबाध ज्ञान प्रदान किया।

सत्यं सारं धृतिं दृष्ट्वा सभार्यस्य च भूपतेः ।

विश्वामित्रो भृशं प्रीतो ददावविहतां गतिम् ॥ २४ ॥

satyaṁ sārāṁ dhṛtiṁ dṛṣṭvā sabhāryasya ca bhūpateḥ viśvāmitro bhṛśaṁ prīto dadāv avihatāṁ gatim

अर्थ: राजा और उनकी रानी की सत्यता, सार-वृत्ति एवं धैर्य को देखकर, विश्वामित्र का हृदय पिघल गया और उन्होंने उन्हें ऐसी गति प्रदान की जिसे कोई रोक न सके। (नवम स्कन्ध, अध्याय 7, श्लोक 24)

अन्तर्मुख होकर, राजा ने तत्त्वों को एक-एक में क्रमशः लीन किया — पृथ्वी को जल में, जल को अग्नि में, अग्नि को वायु में, वायु को आकाश में, और सूक्ष्म तत्त्वों को महान् महत्तत्त्व में — जब तक कि, शुद्ध ज्ञान-स्वरूप को अपना ही स्वरूप जानकर, उन्होंने उस अज्ञान को भस्म न कर दिया जिसने उन्हें ढक रखा था। अमिश्रित आनन्द की चेतना द्वारा उस चिन्तन को भी त्यागकर, और देह एवं अहंकार के समस्त बन्धन को

हटाकर, वे अन्ततः अपने उस मूल स्वरूप में स्थित हो गए जो वाणी एवं तर्क की पहुँच से परे है।

मनः पृथिव्यां तामद्भिस्तेजसापोऽनिलेन तत् ।

खे वायुं धारयंस्तच्च भूतादौ तं महात्मनि ।

तस्मिञ्ज्ञानकलां ध्यात्वा तयाज्ञानं विनिर्दहन् ॥ २५ ॥

हित्वा तां स्वेन भावेन निर्वाणसुखसंविदा ।

अनिर्देश्याप्रतर्क्येण तस्थौ विध्वस्तबन्धनः ॥ २६ ॥

manaḥ pṛthivyām tām adbhis tejasāpo 'nilena tat khe vāyurṁ dhārayaṁs tac ca bhūtādaḥ taṁ mahātmani tasmiñ jñāna-kalām dhyātvā tayājñānaṁ vinirdahan hitvā tām svena bhāvena nirvāṇa-sukha-saṁvidā anirdeśyāpratarkyeṇa tasthau vidhvasta-bandhanaḥ

अर्थ: उन्होंने मन को धरा में, धरा को नीर में, नीर को पावक में, पावक को पवन में तथा पवन को गगन में लीन किया, फिर गगन को समष्टि-तत्त्व में मिलाया; वहाँ शुद्ध ज्ञान की किरण पर एकाग्र होकर उन्होंने उसी से अज्ञान को जला डाला, और मुक्ति के आनन्दमय बोध द्वारा उस ध्यान को भी छोड़कर वे अपने ही मूल रूप में स्थिर हो गए — अकथनीय, तर्कातीत, समस्त बन्धन से सर्वथा रहित। (नवम स्कन्ध, अध्याय 7, श्लोक 25-26)

इस अध्याय का मूल तात्पर्य यही है। वरुण केवल हरिश्चन्द्र की विनती से पिघलकर विलम्ब नहीं सहते, और न ही विश्वामित्र का वरदान किसी कर्मकाण्डीय पूर्णता का पुरस्कार है; यह सत्यनिष्ठा ही है — प्रत्येक विलम्ब, रोहित की सुरक्षा की प्रत्येक चिन्ता, यज्ञ की प्रत्येक कठिनाई में थामी गई — जिसे विश्वामित्र प्रत्यक्ष रूप से सत्यं, सारं, धृतिम् कहकर सम्बोधित करते हैं — सत्य, सार, धैर्य। प्रतीक्षा के वे दीर्घ वर्ष हरिश्चन्द्र की मुक्ति में बाधा नहीं थे, अपितु वही भट्ठी थे जिसमें एक पिता का स्नेह इतना शुद्ध हुआ कि उसे कोई दुःख या हानि डिगा न सके। जहाँ पुरुकुत्स को विष्णु की शक्ति चाहिए थी और त्रिशङ्कु को स्वर्ग तक पहुँचने के लिए किसी अन्य के बल की आवश्यकता पड़ी, वहीं हरिश्चन्द्र को अपने अटूट वचन के अतिरिक्त कुछ न चाहिए था — यह प्रमाण कि अन्त तक थामा गया सबसे सरल गुण भी किसी आत्मा को समस्त बन्धन के पार ले जाने में समर्थ है।

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. दिव्य शक्ति समर्पित आत्मा के माध्यम से कार्य करती है। पुरुकुत्स गन्धर्वों को अपनी शक्ति से नहीं, अपितु “भगवान् विष्णु की शक्ति धारण करके” जीतता है, और उस कर्म का स्मरण आज भी दूसरों को भय से मुक्त करता है (श्लोक 2-3)।
2. विनम्रता-रहित महत्त्वाकांक्षा दो लोकों के बीच लटकी रह जाती है। त्रिशङ्कु, स्वर्ग की ओर उठाया गया किन्तु उसमें प्रवेश न पा सका, आकाश में स्थिर लटका रहता है — एक जीवन का चिरस्थायी चित्र जो पृथ्वी और अपने लक्ष्य के बीच अटका है (श्लोक 5-6)।
3. भगवान् को दिया व्रत एक पवित्र ऋण है। हरिश्चन्द्र की वरुण से की गई प्रतिज्ञा को सहज ही भुलाया नहीं जा सकता; समस्त परीक्षा उसी गम्भीरता से उपजती है जिससे भगवान् को दिया वचन निभाया जाना चाहिए (श्लोक 8-9)।

4. प्रेम और कर्तव्य हृदय को दो ओर खींच सकते हैं। राजा के कोमल विलम्ब एक ऐसे पिता को प्रकट करते हैं जो अपने व्रत और अपने प्रेम के बीच बँटा है — और भगवान् की व्यवस्था मृदुता से मार्ग बना देती है, पुत्र और प्रतिज्ञा दोनों को बचाते हुए (श्लोक 10-20)।

5. सत्यनिष्ठा स्वयं मोक्ष का द्वार बन जाती है। यह हरिश्चन्द्र और शैब्या की अटल सत्यनिष्ठा ही है जो विश्वामित्र को उन्हें आत्मज्ञान देने के लिए प्रेरित करती है; अविचल सत्य हृदय को तब तक शुद्ध करता है जब तक वह अपने मूल स्वरूप में विश्राम न पा ले (श्लोक 24-27)।

एक श्रद्धापूर्ण चिन्तन

हरिश्चन्द्र का नाम युगों से सत्यनिष्ठा के प्रतीक के रूप में गूँजता रहा है, और यह अध्याय हमें दिखाता है कि क्यों। उनकी परीक्षा भव्य नहीं है; यह एक ऐसे मनुष्य की मूक व्यथा है जो भगवान् को दी प्रतिज्ञा और अपने एकमात्र सन्तान के प्रति स्नेह के बीच फँसा है। वे अपना वचन नहीं तोड़ते, फिर भी प्रहार करने का साहस नहीं जुटा पाते, और इसलिए प्रतीक्षा करते हैं, निवेदन करते हैं, विलम्ब करते हैं — और उसी अत्यन्त मानवीय दुर्बलता में भगवान् की करुणा को कार्य करने का अवसर मिल जाता है। नियति रोहित को उसके भटकाव के वर्षों में सुरक्षित रखती है, व्रत की पूर्ति का मार्ग देती है, और अन्ततः समस्त परिवार को दुःख से परे उठा ले जाती है। हरिश्चन्द्र से चातुर्य या बल नहीं, अपितु सरल, अटल सत्य माँगा जाता है, जो प्रत्येक परीक्षा में थामे रखा जाता है। और यही सत्य — कुछ भी अधिक चमत्कारिक नहीं — आत्मज्ञान और समस्त तर्क से परे शान्ति में परिपक्व होता है। यह अध्याय मौन रूप से यह वचन देता है कि सत्य का साधारण गुण, निष्ठापूर्वक पाला गया, एक साधारण हृदय को घर तक पहुँचा सकता है।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज, हरिश्चन्द्र की भावना में, एक ऐसा वचन निभाएँ जिसे निभाना आपको सरल लगे — किसी व्यक्ति से, अपने अभ्यास से, या भगवान् से किया एक छोटा संकल्प — और उसे बिना किसी बहाने के ठीक-ठीक निभाएँ। कार्य करने से पूर्व, रुकें और उस दिन की सत्यनिष्ठा को भगवान् को अर्पित करें, इस प्रार्थना के साथ, “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।” सत्य को अपनी पूजा बनने दें: कितना ही सुविधाजनक क्यों न हो, कोई असत्य न बोलें, और जब वचन निभाना कठिन हो, तब स्मरण रखें कि जिस भगवान् ने रोहित को वन में मार्ग दिखाया, वही आपके लिए भी मार्ग बना सकते हैं। विश्वास रखें कि सत्य में स्थिर हृदय, मौन और निश्चित रूप से, उन्हीं की ओर खिंचता जा रहा है।

उपसंहार

राजा हरिश्चन्द्र की कथा अपनी घटनाओं के लिए नहीं, बल्कि एक ही गुण के लिए युगों तक स्मरण की जाती है: बिना किसी समझौते के थामी गई सत्यनिष्ठा, चाहे उसका मूल्य पिता को अपनी सबसे प्रिय आशा ही क्यों न देना पड़े। वरुण की दीर्घ प्रतीक्षा, रोहित के वन में बीते वर्ष, और वह यज्ञ जिसने अन्ततः राजा को मुक्त किया — ये केवल कर्मकाण्ड नहीं थे, अपितु भगवान् की वह व्यवस्था थी जिसने एक अटल हृदय को परखा और फिर उसे पुरस्कृत किया। वही सत्यनिष्ठा, जो रानी शैब्या में पूर्णतः विद्यमान थी, उन्हें आत्मा के ज्ञान और समस्त बन्धन से मुक्ति का द्वार खोलती है। यह अध्याय हमें अपनी सबसे सरल शिक्षा के साथ छोड़ता है: अन्त तक निभाई गई प्रतिज्ञा स्वयं एक अर्पण बन जाती है, और जो भगवान् ऐसे निष्ठान् हृदय का सम्मान करते हैं, वे उसे अपने ही समय पर शान्ति तक पहुँचाएँगे।

श्रीमद्भागवत का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जगाए।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

सन्दर्भ एवं आभार

- मुख्य संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, सम्पूर्ण), नवम स्कन्ध, सप्तम अध्याय, पृष्ठ 28–30।
- शृंखला: श्रीमद्भागवत विज्ञान • बिस्वा सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन एवं अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, श्रद्धापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी एवं लिप्यन्तरण सहित दिए गए हैं और उनके अर्थ सारांश रूप में प्रस्तुत हैं। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद या टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी प्रकाशक के साथ किसी सम्बद्धता या उसके अनुमोदन का दावा नहीं किया गया है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-9-chapter-7-line-of-mandhata-and-king-hariscandra-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञान • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट